RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-01
January-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

वैश्वीकृत युग में गाँधी का राज आर्थिकी दर्शन की भूमिका

अखिलेन्द्र कुमार रंजन

शोधार्थी, विश्वविद्यालय इतिहास–विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा

ARTICLE DETAILS

Article History

Published Online: 28 January 2018

Keywords
आर्थिकी दर्शन वैश्वीकृत गाँधी

ABSTRACT

गाँधीजी सिद्धान्त निर्माता नही थे, पर फिर भी उनके सिद्धान्त थे। उनके समकालीन, राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक मुद्दों पर विचार सहजता से अभिव्यक्त हुए, जहाँ व्यक्तियों को सामुदायिकता से अधिक महत्व था। राज्य व समाज के सामुहिकता के सिद्धान्त को नकारते हुए गाँधी का तर्क था कि व्यक्ति ही चेतना का अतः भौतिकता का भी प्रयोग कर सकता है। गाँधी ने व्यक्तिगत स्वायत्ता का ऐसा सिद्धान्त दिया जहाँ व्यक्ति अपनी परम्पराओं और समुदाय के अन्तर्गत सशक्त होता है। व्यक्तियों को सारूप करके और उनकी भिन्नता की उपेक्षा करके, आधुनिकता के अर्न्तगत परिभाषित पश्चिमी तर्कवाद ने राज–आर्थिकी व सांस्कृतिक जड़ों के कारण मानव के विविधतपूर्ण स्वभाव की उपेक्षा की है। गाँधी ने आधुनिकता के हमारे अवधारणीकरण की कुछ कमियों को पूरा किया है। ऐसा उन्होंने समकालीन प्रचलनों तथा संस्थाओं मे सत्तत रूप से नैतिकता लागू मूल्यांकित करने की आधुनिक प्रकृति उन्हें साधन मात्र बना देती है।

प्रस्तावना :

बीसवी शताब्दी एक विरोधाभासी शताब्दी थी। दो विश्वयुद्वों एवं अनेक कड़वे व अंतहीन संघर्षो के साथ यह इतिहास मे एक अविस्मरणीय शताब्दी रहीं है। इसी शताब्दी के अंतिम दो दशकों ने दुनिया को वैश्वीकरण के मार्ग पर ला खड़ा किया है, जहाँ असहिष्णुता, आंतकवाद एवं युद्ध निहित है। इसे हम विकास और मानव सर्वाधिकवाद और लोकतन्त्र, एकरूपीकरण और बहुलवाद, वर्चस्व और संतुलन पुरूषवाद एवं स्त्रीवाद और इन सबसे ऊपर वैश्विक गाँव एवं खंडित सभ्यता, नये विश्व की अव्यवस्थित उभरती हुई भयावह दिशा के रूप में देखते है। विश्व ब्रह्माण्ड़ (सत्य, सौंदर्य एव अच्छाई) की बुनियादी प्रकृति बिखर गई है। आर्थिक वैश्वीकरण उदारवादी विचारधारा का एक विस्तार है। उदारीकरण एवं भूमण्ड़लीकरण की सहवर्ती नितियॉ विवादों से अछूती नहीं है। विशेषकर, जब इन्हे विदेशी धरती पर प्रत्यारोपित किया जाता है और जब यह ऐतिहासिक, सांस्कृतिक जड़ों एवं परिस्थितियों की अनदेखी करती है। वास्तव में संस्कृति एवं परम्पराऐं प्रत्येक राजनीतिक सिद्वान्त को अपने विशिष्ट रंग एवं भेदभाव वाले प्रभाव प्रदान करती है।

वैश्वीकरण वर्तमान युग की उभरती हुई सशक्त वैश्विक अवधारणा है। वैश्विक राजनीति में पचास का दशक परिवर्तनकारी माना जाता है, जब द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति पर विभिन्न औपनवेशिक राज्य स्वतंत्र राष्ट्रीय राज्य के रूप में उद्भित हुए। इस दौरान अधिकांश देशों की आर्थिक प्रक्रियाओं में राज्य की भूमिका स्वीकारते हुए राज्य को आर्थिक विकास के प्रमुख इंजन के रूप में देखा गया। सत्तर के दशक के अंत तक आते–आते इस सोच में बदलाव आया तथा अब राज–आर्थिकी विकास यंत्र के रूप महत्वहीन हुए तथा व्यक्ति तथा बाजार ताकतों ने अर्थ को नियंत्रित एवं नियोजित करना शुरू किया, जिससे आर्थिक उदारीकरण को बढ़ावा मिला। यही आर्थिक उदारीकरण वैश्विकता की ओर पहला कदम था, जिसने अस्सी एवं नब्बे के दशक में सम्पूर्ण विश्व को आर्थिक आधार पर एकीकृत करने का प्रयास करते हुए विश्व आर्थिक संगठन के तहत केन्द्रीत करने का प्रयास किया। इस आर्थिक वैश्वीकरण ने जहाँ एक ओर बाजारवाद को बढ़ावा दिया वहीं दूसरी ओर स्वतंत्र आर्थिक प्रतियोगिता एवं प्रतिस्पर्द्धा को भी गति प्रदान की जिसमें डार्विन का "Survival of the fittest" का सिद्धांत प्रतिफलित होता प्रतीत हुआ। इसमें सबसे अधिक संघर्ष विकासशील राष्ट्रों द्वारा किया गया।

भारत एक विकासशील राष्ट्र के रूप में उदारीकृत आर्थिक वैश्वीकरण से सामजस्य स्थापित करने में संघर्षरत है। चूंकि भारत एक कृषि प्रधान एवं परम्परागत अर्थतंत्र वाला राष्ट्र है। अतः बाजारकृत प्रतियोगिता एवं प्रतिस्पर्द्धा जो प्रोद्यौगिकी, संचार एवं तकनीकी विकास को लेकर है, में विश्व के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई महसूस करता है। वहीं राज्य एवं आर्थिक बाजारीकृत व्यवस्था के साथ सह संबंधों, उदारीकृत आर्थिक परिवेश के तहत वैश्वीकरण की प्रक्रिया के तहत राज्य की भूमिका को किस प्रकार संतुलित किया जाए को लेकर संघर्षमय स्थिति में है? इसके निदान हेतु जो प्रतिमान दिखाई देता है वह गाँधी का राज–आर्थिक दर्शन ही है जो न केवल राज्य एवं आर्थिक संसाधनों, उत्पादन एवं वितरण, व्यय एवं संचय, भोग एवं त्याग के बीच तारतम्यता स्थापित करने में सहायक होगा वरन् वैश्वीकरण के इस युग में भारत को किस प्रकार तथा कैसी भूमिका का निर्वाह करना है हेतु भी मार्गदर्शन प्रदान करेगा? इस आधार पर प्रस्तुत आलेख ''वैश्वीकृत युग में गाँधी का राज आर्थिकी दर्शन की भूमिका'' प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

गाँधी के जीवन, कृतित्व और विचारधारा पर और आज के युग में उनकी सार्थकता पर जितना भी अध्ययन चिंतन एवं विचार विनिमय हुआ वह एक विचार तथा कार्यक्रम को लेकर हुआ। समग्र अध्ययन तथा वैश्वीकृत युग में राजनीति और आर्थिकी के सहसंबंधों पर आधारित नहीं हुए हैं। अतः प्रस्तुत अध्ययन राजनीतिविज्ञान एवं अर्थशास्त्र से जुड़ा होने पर अंर्तविषयी दृष्टिकोण के आधार पर भी वर्तमान में महत्वपूर्ण है। गाँधी के प्रिय विषय थे साम्प्रदायिक सद्भाव, राष्ट्रीय एकता, ग्राम विकास, शिक्षा, लघु उद्योग हस्तशिल्प, खादी, प्राकृतिक चिकित्सा, कृषि विकास, नशाबंदी, राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी तथा विशिष्ट अर्थनीति आदि। संस्कृति, शिक्षा, धर्म, दर्शन, अध्यात्म, राजनीति, आर्थिक नीति, सामाजिक सुधार, स्वास्थ्य तथा चिकित्सा जैसे क्षेत्रों में उन्होंने अपनी भारी छाप छोड़ी है। यही कारण है कि देश में भी और देश से बाहर विश्व भर में उनका प्रभाव बहुत और गहरा रहा है। आज हम जिस संक्रमण काल से गुजर रहे हैं और राष्ट्र के सामने जो भयावह और विषम परिस्थितियाँ हैं, उनके परिप्रेक्ष्य में गाँधी जी के दर्शन की और उनके विचारों की सार्थकता और उपादेयता पहले से कहीं अधिक है और दिनों दिन बढ़ती जा रही है।

आर्थिक व्यवस्था के क्षेत्र में गाँधी जी विकेन्द्रीकरण, आत्मनिर्भरता, स्वदेशी नियंत्रित उपभोग ग्राम शिल्प और लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देने के पक्षधर थे। उनका मानना था कि उत्पादन और सेवा संसाधनों का उपयोग व्यक्तिगत उपभोग के लिए नहीं अपितु सभी की बुनियादी जरूरतों से पूरा करने में किया जाये। गाँधी के सपनों के भारत में सबको काम, रोटी, कपड़ा और स्वच्छ पानी मिलना चाहिए था। हर गाँव में खेती हो, किसान हो, बढ़ई हो कुम्हार हो, सूत कातने वाले, दर्जी हो, तेल पेरने वाले हो ताकि ग्रामवासियों को अपनी जरूरत की वस्तुएँ लेने के लिए बाहर न जाना पड़े। आर्थिक विकास, पूंजी निर्माण और बचत की उपलब्धता पर निर्भर करता है साधन भी आवश्यक है लेकिन अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए साधन मात्र काफी नहीं है। इसलिए योजना पद्धति के माध्यम से निश्चित प्राथमिकता के अनुसार साधनों को लगाना होता है। गाँधीजी का मानना था कि आर्थिक प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अवसर होना चाहिए ताकि वह दो जून की आजीविका स्वाभिमानपूर्वक प्रदान कर सके। महात्मा गाँधी ने इस समस्या के प्रति लोगों का ध्यान बराबर 'स्वदेशी' आंदोलन के माध्यम से खींचने का प्रयास किया है। गाँधीजी ने असीमित संपत्तिधारक उद्योगपति की संपत्ति को समाज के अन्य वर्गों, शोषित, पीड़ितों की सेवा में लाने के लिए तथा उद्योगों के द्वारा मजदूर वर्ग के साथ हो रहे अन्याय शोषण से मुक्ति के लिए ऐसे सिद्धांत की स्थापना की जिससे समाज में आर्थिक विषमता कम हो। इस सिद्धांत को उन्होंने 'न्यासिता सिद्धांत' का नाम दिया। जिसमें पूंजीपति अपने धन का स्वामी न होकर रक्षक रहेगा और इस पूंजी का उपयोग समाज के लिए होगा। आधुनिक दौर में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था होने के कारण गरीब ज्यादा गरीब और अमीर अधिक अमीर बनता जा रहा है। जिससे शोषित वर्ग अनेक आवश्यकताओं से वंचित रहता है। ऐसी परिस्थिति में आज यह अत्यंत आवश्यक हो रहा है कि पूंजीपति अपनी संपत्ति का संग्रह न करके निम्न वर्ग के कल्याण के कार्य हेतु उसका संरक्षक बने। वर्तमान व्यवस्था को अहिंसात्मक बनाने के उद्देश्य से पूंजीपतियों के लक्ष्य परिवर्तन के प्रयत्न किया जाए ताकि वे अपने नियंत्रण में आने वाली सम्पत्ति को व्यक्तिगत सम्पत्ति न समझें, बल्कि उसे जनता की धरोहर समझे। बड़े–बड़े उद्योगपतियों को अपनी अलग ट्रस्टीशिप की व्यवस्था करके राज्य तथा देश की सेवा करनी चाहिए। आज इस परिस्थिति में गाँधीजी ने आर्थिक समानता लाने के लिए जो मार्ग ढूंढा। वह वर्तमान प्रजातंत्र एवं देश के विकास के लिए उपयोगी है। आज अर्थव्यवस्था मानव के कल्याणर्थ नही अपितु धन लाभ के चक्रव्यूह में फंस गई और इसी के दुष्परिणाम आज समस्त विश्व को भोगने पड़ रहे हैं। श्रम पर आधारित समाज की रचना करके गाँधीजी ने राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक शोषण एवं अन्याय के मूलाधार पर ही करारी चोट की, जो आर्थिक समस्याओं के उत्पन्न होने का मूल कारण है। इस तरह गाँधीजी के विचार समकालीन समाज व्यवस्था में प्रस्तुत हैं।

इस प्रकार गाँधी के आर्थिकी विचार और कार्यक्रम स्वदेशी का आधार मजबूत करते हुए विश्व पहुँच बनाने पर बल देते थे, जो वैश्वीकृत युग में भी प्रासंगिक है। वर्तमान वैश्वीकृत युग में जिस प्रकार बहु विदेशी कम्पनियाँ अपना जाल फैला रही हैं इस हेतु गाँधी एवं रविन्द्रनाथ टैगोर के बीच हुई बहस सटीक प्रतीत होती है। गाँधी से विचार–विमर्श करते हुए गुरूदेव ने कहा कि देश के नागरिकों को इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि उनका शोषण भारतीय पूंजीपति कर रहे हैं या विदेशी पूंजीपति, इस पर महात्मा गांधी ने कहा कि स्वदेशी पूंजीपति के वृक्ष के फल इस धरती पर गिरते हैं। इन पूंजीपतियों द्वारा स्वदेशी श्रमिकों को रोजगार मुहैया होगा वहीं विदेशी पूंजीपति हमारी पूंजी लूट–खसोट कर ले जाएंगे। यही स्थिति आज प्रतीत होती है। अतः इससे बचने के लिए आवश्यक है कि हम गाँधी द्वारा दिखाए मार्ग स्वदेशी को चुने। साथ ही वैश्वीकृत भौतिकवादी युग में बढ़ती लालसाओं, तृष्णा एवं भूख से उत्पन्न समस्याओं के निराकरण हेतु गाँधी के अपरिग्रह तथा मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने हेतु सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य जैसे कार्यक्रमों एवं विधियों को स्वीकार कर भावी पीढ़ी को संयमी, संतोषी तथा संतुलित बनाया जा सकता है। भारत गाँवों का देश है। अतः भारत का विकास गाँवों के विकास से ही संभव हो सकता है। इसलिए आवश्यकता है राज्य एवं अर्थनीति के बीच उस तालमेल की जो गाँधी द्वारा

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

प्रतिस्थापित प्रतिमान से मेल खाती हो। गाँधी का मानना था कि पूंजी का एकत्रीकरण कुछ मुट्ठीभर लोगों के हाथ में नहीं होना चाहिए वरन् पूंजी का वितरण ऐसा होना चाहिए कि इस विशाल देश को बनाने वाले 70 प्रतिशत लोगों को पूंजी आसानी से प्राप्त हो। अतः राज्य की भूमिका अर्थ के उत्पादन, वितरण में होनी चाहिए। जो वैश्वीकृत युग जिसमें राज्य की भूमिका गौण होती जा रही है में नयी स्थिति को स्वीकार करता है। निष्कर्षतः राज्य एवं अर्थतंत्र के बीच संतुलन, स्वदेशी एवं विदेश के बीच स्व की प्रभुता तथा भौतिकवाद एवं आदर्श के बीच समन्वय की आवश्यकता है।

कुछ अनुसंधानकर्ताओं के द्वारा वैश्वीकृत युग में गाँधी का राज आर्थिकी दर्शन पर कुछ विचार प्रस्तुत किया है–

विद्या जैन (2012)– प्रस्तुत पुस्तक में यह कहा गया है कि भूमण्डलीय के इस दौर में बाजार हमारे जीवन पर हावी होता जा रहा है। भौतिकता की और बढते हमारे आसक्ति ने नैतिक मूल्यों को हाशिये पर धकेल दिया है। आगे निकलने की होड में मनुष्यता दम तोडती हुई नजर आती है। ऐसा केवल राजनीति क्षेत्र में नही हो रहा है बल्कि पर्यावरण, समाज, संस्कृति के क्षेत्र में भी ऐसा ही हो रहा है। आज परिस्थितियों की जटिलता ने गॉधी को अत्यधिक प्रासंगिक बना दिया है। प्रस्तुत पुस्तक में आज के संदर्भो में गॉधी चिन्तन की उपादेयता को समझने का प्रयास किया गया है।

अनिल दत्त मिश्र (2012)– प्रस्तुत पुस्तक में गॉधी अध्ययन और संस्थानो के क्षेत्र में दो दशको के अनुसंधान, अध्यापन और प्रशासनिक अनुभव का नतीजा है। सामान्य पाठको के लिए लिखी गई है। गॉधीजी एक अध्ययन समूची दुनिया को गुंजायमान कर रहे महात्मा गॉधी की मूलभूत धारणाओ का गहन विश्लेषण करती है। आम लोगो के बीच से बहुत बडी शखसियत के रूप में उभरे और उन्होने लाखो लोगो को राजनीति, सामाजिक, आर्थिक और मानवीय स्वतन्त्रता के प्रति जागरूक बनाया गया।

ब्रह्मदत्त शर्मा (2011)– प्रस्तुत लेख 'गाँधी चिन्तन में राष्ट्रवाद' पुस्तक में भारतीय राष्ट्रवाद के कमिक विकास एवं विभिन्न स्वरूपों का विवेचन किया गया है। प्रस्तुत लेख में गाँधी के अर्न्तराष्ट्रवाद का भी विवेचन किया गया है। गाँधी संकीर्ण राष्ट्रवाद के पक्षधर नही थे। उन्होने राष्ट्रवाद को ब्रिटिश सरकार के सहयोगी के रूप में प्रस्तुत किया करने का प्रयास किया है। इसमें विराम गंज की चुंगी की समाप्ति, अहमदाबाद सत्याग्रह, खेडा आन्दोलन, चम्पारन आन्दोलन का भी विवेचन किया है। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत अध्यायों में इनके द्वारा चलाये गये असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, भारत छोडो आन्दोलन के कार्यक्रमो का एवं कार्य प्रणाली का विवचेन किया है। प्रस्तुत अध्याय में गाँधी द्वारा चलाये गये राष्ट्रवादी आन्दोलनों का स्वतन्त्रता प्राप्ति में योगदान का भी मूल्यांकन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

दीपांशु अग्रवाल (2011)– प्रस्तुत पुस्तक में कहा गया है कि गाँधी जी की विचारधारा का स्त्रोत उनकी लेखनी नही बल्कि उनकी जीवनी है। गाँधीजी ने स्वयं कई बार स्पष्ट कहा है कि मेरा जीवन ही मेरा संदेश है उनके संघर्ष का प्रारम्भ उनके दक्षिण अफ्रीका के प्रवास से हुआ। वहॉ की क्रूर आर्थिक और सामाजिक अमानवीय व्यवस्था को देखकर गाँधीजी ने अहसयोग और सविनय अवज्ञा आन्दोलन वहॉ की शासन व्यवस्था के विरूद्व चलाया। गाँधीजी आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक रूढिवादिता और धर्मान्धता के कट्टविरोधी थे। गॉधी जी की दृष्टि में अर्थशास्त्र शब्द के 'अर्थ' को धर्म से जोडे बिना ना तो कोई चिन्तन किया जा सकता है और ना ही कोई क्रियाकलाप किया जा सकता है। उनकी आर्थिक नीति की अवधारणा मानवता पर आधारित है। वे राजसत्ता को मानवता का अनुगामी मानते है। सर्वधर्म समभाठ स्वदेशी वस्तुओ का उपयोग, अस्पृश्यता निवारण, शारिरीक श्रम ट्रस्टशिप, सत्याग्रह आदि गॉधीजी के अमोध अस्त्र है, जो उनके सिद्वान्तो के मूलाधार भी है। अतः इस पुस्तक में महात्मा गॉधी के आर्थिक विचार आज के संदर्भ में किस प्रकार प्रांसगिक है इनका विश्लेषण किया गया है।

डा. हरिदास रामजी शेण्डे सुदर्शन (2011)– प्रस्तुत पुस्तक को तीन खण्डों में विभाजित किया गया है। प्रथम खण्ड में गॉधी के आर्थिक विचार, कुटीर उद्योग धंधो का सर्मथन, व्यक्तिगत समत्ति और प्रन्यास धारणा, अपरिग्रह का सिद्वान्त, वर्ग सहयोग की धारणा एवं उनके सामाजिक विचार, वर्णव्यवस्था, अस्पृश्यता का अंत, सांप्रदायिक एकता आदि को स्थान दिया गया है। द्वितीय खण्ड में भारतीय प्रसिद्व महापुरूषों के प्रति विचार प्रस्तुत किये गये है ओर पुस्तक के तृतीय खण्ड में गाँधी के विचार प्रस्तुत किये गये है जो इस प्रकार है– राजनीति के रूप में असहयोग, क्रान्ति–अहिंसा, खादी चरखा, सत्याग्रह, सर्वोदय, खेती, व्यापार आदि विचारो को स्थान दिया गया है।

डॉ.श्रीमती रश्मि चतुर्वेदी (2011)– प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य गाँधी युगीन राष्ट्रीय आंदोलन की आर्थिक पृष्ठभूमि का विवेचन एवं विश्लेषण करना है। मानव जाति के इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि राजनीति एवं आर्थिक परिस्थितियों का परस्पर गहन सम्बन्ध रहा है। आर्थिक परिस्थितयों में परिवर्तन से राजनीतिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों में परिवर्तन से आर्थिक परिस्थितियां सदैव ही प्रभावित हुई दिखाई पडती हैं। इस पुस्तक में गांधी युग में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में आर्थिक मुद्दो परिस्थितियों एवं गांधीजी के आर्थिक कार्यक्रमों का वर्णन किया गया है।

रामजी सिंह (2011)– प्रस्तुत पुस्तक में गॉधी ने मानवता के भविष्य के विषय में लिखा है मानव विश्व में बुद्धि और विवके लेकर आया है, लेकिन चूंकि वह अनेक कामनाओं वाला होता है। सृष्टि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या भी बन

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

जाता है। उसका अनेकानेक कठिनाईयों के बावजूद भी उसका अस्तित्व कामय रहता है। इस बात का द्योंतक है कि उसमें विनाश से अधिक रचना, विखंडन से अधिक एकात्मकता का तत्व है। गाँधी के अनुसार जब ईश्वर एक है तो मानवता भी एक और अखंडित है। इसलिए गॉधी जी मानव सेवा को ही ईश्वर की पूजा समझते थे। लेकिन अहिंसा एवं शान्ति की बुनियाद के लिए आवश्यक है कि हमारी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक संरचना मे भी अहिंसा के तत्व है। इस प्रकार से गॉधी के सर्वागींण विचारो को यहॉ उपस्थित किया है। जीवन अखंड है, इसलिए गाँधी विचार भी समग्रता में आता है।

डॉ. एम.के.मिश्रा, डॉ. कमल दाधीच (2011)– प्रस्तुत पुस्तक 'गॉधी दर्शन' समग्र जीवन का दर्शन है। गाँधीजी केवल राजनीतिक नेता नही थे। वे इससे ऊपर थे। गॉधीजी का दर्शन, व्यवहार और सिद्धान्त का अनूठा समन्वय हैं। उनके विचार उनके विभिन्न प्रयोगो और अनुभवो की उपज थे। गाँधीजी ने अपनी 'आत्मकथा' को 'सत्य के प्रयोग' नाम दिया था। गांधीजी अपने राजनीतिक प्रयोगो की अपेक्षा अपने आध्यात्मिक प्रयोगो को अधिक महत्व देते थे। इस प्रकार गांधीजी ने गॉधी दर्शन मे सत्य, बौद्धिक दर्शन, दार्शनिक स्वरूप, धर्मनिरपेक्षता, ग्रामस्वराज्य की अवधारणा, समाज दर्शन, आर्थिक दर्शन, राजनीतिक प्रगतिदर्शन आदि के बारे में विचार व्यक्त किये है।

महात्मा गॉधी के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक विचारों तथा उनके व्यक्त्वि व नेतृत्व का समकालीन भारतीय राजनीति एवं भारतीय राष्ट्रनिर्माण के स्वरूप पर गहरा प्रभाव रहा है। उन्होंने तत्कालीन विश्व में चल रहे, राजनीतिक प्रयोगो की असंगतियों से हटकर राजनीतिक व्यवस्था के संदर्भ में एक मौलिक चिन्तन किया है। उनके दिये गये सिद्धान्तो न 20वीं शताब्दी में भी लोगों को सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। अगर विश्व में शान्ति चाहिए तो एक ही रास्ता है–अहिंसा। इस प्रकार महात्मा गाँधीजी कोरे राजनीतिक चिन्तक ही नहीं थे। उससे बड़े कर्मयोद्धा भी थे। गॉधीजी के विचारो के अनुरूप ही आज के समय में युद्ध हिंसा एवं शस्त्र निर्माण, परमाणु बम की विनाशकता के विरोध में वातावरण बनाया जा सकता है। आज भारत को पुनः गॉधीजी को और अधिक सक्रियता से विश्व की समस्याओं के समाधान के लिए विचार एवं कर्म दोनो ही दृष्टियों से विश्व रंगमंच पर लाना होगा।

गाँधीजी की अर्थनीति यह है कि हर गाँव में ऐसे सब उद्योग धंधे होने लगे जिनसे उस गाँव के समस्त निवासियों की जीवन संबंधी आवश्यकताएँ पूरी कर सके। हर गाँव में खेती हो किसान हो बढ़ई हो कुम्हार हो, सूत कातने वाले हो ताकि जरूरत की वस्तुओं के लिए बाहर न जाना पड़े। गाँधीजी की सम्पूर्ण आर्थिक योजना का आधार स्वदेशी है।

निष्कर्ष :

गाँधीजी अर्थशास्त्र की प्रासंगिकता के प्रश्न पर आधारित है। मेरे सपनों का भारत पुस्तक में गाँधी जी ने लिखा है कि भारत कर्मभूमि है, भोगभूमि नहीं। भारत का भविष्य पश्चिम के उस रक्तरंजित मार्ग पर नहीं है, जिस पर चलते–चलते पश्चिम अब खुद थक गया है। वस्तुतः गाँधी विश्व पुरूष थे। दुनिया के विभिन्न देशों में गाँधी को अपना आधार मानकर एक नया समाज विकसित हो रहा है। इस प्रकार महात्मा गाँधी ने कहा कि स्वदेशी पूंजीपति के वृक्ष के फल इस धरती पर गिरते हैं इन पूंजीपतियों द्वारा स्वदेशी श्रमिकों को रोजगार मुहैया होगा। गाँधी की दृष्टि में पूंजीपति देश के दोस्त हैं मैनचेस्टर की कपड़ा मिलों के हित वे नहीं देखते थे जबकि आज नेता विदेशी कम्पनियों को पलक बिछाकर आमंत्रित कर रहे है। गाँधी जी का मूल सिद्धांत था कि देश की पूंजी का उपयोग देश की जनता के हित के लिए किया जाना चाहिए। महात्मा गाँधी विचारों, तकनीकों एवं जानकारियों का वैश्वीकरण चाहते थे। वैश्वीकरण का उद्देश्य गरीब देशों में प्रबंधन उत्पादन तथा अनुसंधान आदि की जानकारी सरलता और सुगमता से उपलब्ध कराना होना चाहिए।

संदर्भ :

1. विद्या जैन, गाँधी दर्शन समसामयिक संदर्भ, रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर 2012
2. अनिल दत्त मिश्र, गाँधी एक अध्ययन, डार्लिंग किरस्टले (इंडिया) प्रा.लि. नई दिल्ली, 2012
3. ब्रह्मदत्त शर्मा, गाँधी चिन्तन में राष्ट्रवाद आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2011
4. दीपांशु अग्रवाल, महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारो की सार्थकता, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011
5. डा. हरिदास रामजी शेण्डे सुदर्शन, गाँधी विचार एवं चिन्तन दृष्टि (महापुरूषों के संदर्भ में), साहित्यगार, चौडा रास्ता, जयपुर, 2011
6. डॉ. श्रीमती रश्मि चतुर्वेदी, गाँधी युग में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की आर्थिक पृष्ठभूमि, ए.पी.एच. पब्लिसिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 2011
7. रामजी सिंह, गॉधी और मानवता का भविष्य, कामनवैल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2011
8 डॉ. एम.के.मिश्रा, डा. कमल दाधीच, गाँधी दर्शन अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2011

© RRIJM 2015, All Rights Reserved